International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 685-688

अरविन्द घोष के धार्मिक कार्यो का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ0 कृष्ण बहादुर सिंह
पी–एच.डी. (शिक्षा), वरिष्ठ अध्यापक, शासकीय उच्च. माध्यमिक विद्यालय, अमरपुर, जिला उमरिया, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र अरविंद घोष के धार्मिक कार्यों का समीक्षात्मक अध्ययन पर आधारित है। श्री अरविन्द का शिक्षण विधि के सम्बन्ध में विचार पूर्णतः स्पष्ट नहीं फिर भी उन्होंने अनेक विधियों का प्रतिपादन किया है जैसे रूचि के आधार पर शिक्षा भाषा में मातृभाषा के ज्ञान पर जोर दिया है। श्री अरविन्द का मानना है कि बालक के साथ प्रेम तथा सहानुभूति का वातावरण उत्पन्न करना चाहिए। श्री अरविन्द के अनुसार मस्तिष्क का चौथा भाग ज्ञान अथवा चेतना की शक्ति है व्यक्ति इसी शक्ति के आधार पर अपने विकास की वर्तमान अवस्था में पहुँच सका है। शिक्षकों का कतर्व्य है कि वे बालकों की इस शक्ति का विकास इस प्रकार करे कि उसमें लालच भेद–भाव गलतियाँ आदि दुर्गुणों से प्रभावित कल्पना न मिली हो। इस शक्ति का विकास सम्पूर्ण मानव जाति के लिए लाभदायक और अत्यन्त आवश्यक है इसका विकास शिक्षकों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से किया जाना चाहिए इसके लिए बालक को अधिक से अधिक स्वतंत्रता और अवसर प्रदान किये जाने चाहिए फिर बालक स्वयं ही ज्ञान खोज कर सकेगा।

मूल शब्द : अरविन्द घोष, आश्रम, धार्मिक कार्य, शिक्षण।

प्रस्तावना
श्री अरविन्द साधु थे, सन्त थे और एक बहुत बड़े योगी थे नैतिकता और धर्म में उनकी आस्था थी वे शिक्षा को नैतिकता तथा धर्म पर आधारित करना चाहते थे श्री अरविन्द के विचार में धर्म कोई भी हो और कैसा भी हो परन्तु वह मनुष्य को अपने लिए दूसरों के लिए ओर ईश्वर के लिए जीना सीखता है किसी धर्म से घृणा करना, वह धर्म का लक्ष्य नहीं है। यह तो धार्मिक संकीर्णता का परिचय है साम्प्रदायिकता का विकास इसी संकीर्णता के कारण होता है श्री अरविन्द संसार के सब धर्मों को समान दृष्टि से देखते थे उनका विचार था कि धर्म के अभाव में मनुष्य अपने आध्यात्मिक स्वरूप को नहीं पहचान सकता।[1] इन्होंने 'भवानी मन्दिर' योजना तैयार की जिसमें भारतमाता के निस्वार्थ सेवकों के प्रशिक्षण की बात थी। शायद यह बाद में आने वाले अरविन्द आश्रम की पहली रूपरेखा थी।

अरविन्दों आश्रम
अरविन्दो आश्रम पाण्डिचेरी में है अरविन्दो आश्रम का जन्मदाता मीरा अलफसा का जन्म 21 फरवरी 1878 में पेरिस में हुआ था जब वह अपने गुरू की तलाश में विश्व भ्रमण कर रही थी। पाण्डिचेरी पहुँचने पर उन्हें लगा कि श्री अरविन्दों के रूप में उन्हें गुरू मिल गया और 1920 में स्थायी रूप से पण्डिचेरी में बस गयी।
श्री अरविन्द 1926 में जब एकान्त बास किया तब उनके शिष्यों को आत्म चेतना के लिए मार्ग दर्शन प्रदान करने के जिम्मेदारी मा पर आ पड़ी। आश्रम में साधकों की आवश्यकताएँ और आकांक्षाएं श्री अरविन्द अथवा माँ के योजना से अधिक थी। पाण्डिचेरी के इस आश्रम में आध्यात्मिक वृत्ति के लगभग 2000 सदस्य तथा कुछ गैर सदस्य रहते हैं। ये आश्रम वासी 400 से भी अधिक भवनों में रहते हैं और प्रमुख परिसर में श्री अरविन्द तथा माँ की समाधियाँ बनी हुई हैं अपने आश्रम के बारे में श्री अरविन्दों ने कहा था कि "इसकी स्थापना संसार का परित्याग कर वहाँ रहने के लिए नहीं की गयी है बल्कि उसका उद्देश्य ऐसे केन्द्र का निर्माण है जहाँ रहकर व्यक्ति ऐसे सुनियोजित जीवन का विकास करे अन्त में उच्च आध्यात्मिक चेतना में परिवर्तित होकर आत्मा के विस्तार को अभिव्यक्त करे।
आश्रम का जीवन अनुशासन बद्धता के लक्ष्य पर केन्द्रित है लेकिन मुझे नहीं लगता कि माता जी कठोरता के साथ नियम पालन कराती है बल्कि उनके विरूद्ध मैने देखा है कि उन्होंने नियम भंग आज्ञा उल्लंघन आत्मध्यापन और विद्रोह के उस विशाल स्तूप का सामना जिसने उन्हें घेर रखा है कितनी सतत मृदुलता सहनशीलता धैर्य और दयालुता के साथ किया है। यहाँ तक कि अपने सामने किये गये विद्रोह और अपने आपको अत्यन्त बुरी निन्दाओं से अक्रान्त करने वाले उग्र पतों को सहा है कोई कठोर अनुशासन इन सब चीजों के साथ इस व्यवहार न करता।[2]
आध्यात्म प्राप्त करने के आवश्यक अंग के रूप में प्रत्येक आश्रमवासी को कोई न कोई कार्य करना पड़ता है। अरविन्दों आश्रम चलाने का कार्य अत्यन्त कठिन है आश्रम के सदस्य मिलजुलकर सब कार्य करते हैं माँ ने इन शब्दों अभिव्यक्त किया है "उस दिव्य आत्मा के लिए काम करना शरीर से उसकी पूजा करने जैसा ही है। आप जो काम करते हैं वह महत्वपूर्ण नहीं है जिस तरीके से आप काम करते हैं वह महत्वपूर्ण है उस दिव्य ईश्वर का निरन्तर स्मरण करे और फिर आप जो भी करे उसमें ईश्वरी की उपस्थिति का आभास होगा।" आश्रम अपने सदस्यों को मकान बिजली फर्नीचर, सफाई कपड़े स्वास्थ्य चिकित्सा, आदि की सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। आश्रम के खेतों और बगीचों में चावल सब्जी और फल–फूल की फसल होती है वही पर लकड़ी के काम इस्पात हाथ के कागज और हस्तशिल्प के उद्योग भी लगे हुए हैं आश्रम में प्रशासन का कार्य ट्रस्टियों का एक बोर्ड करता है और आश्रम के भक्तजन तथा प्रशंसक उसे अपना सहयोग देते हैं।[3]

आश्रम स्कूल
श्री अरविन्द ने आश्रम वासियों के बच्चों के लिए 1943 में एक स्कूल की स्थापना की जिसे आश्रम स्कूल कहा गया प्रारम्भ में 32 बालकों को लेकर दूसरी इसकी स्थापना की गयी आज यहाँ

विभिन्न देशों धर्मों और जातियों के लगभग 300 बच्चे शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं हमें दो भागों में विभाजित किया गया है जूनियर तथा माध्यमिक शिक्षा माध्यम फ्रेन्च भाषा है स्कूल में गणित विज्ञान भूगोल इतिहास आदि विषयों के अतिरिक्त अंग्रेजी, जर्मन, संस्कृत आदि भाषाओं के अध्ययन की सुविधा है। इसके शिक्षक आश्रम वासी साधक हैं आश्रम स्कूल में परम्परागत परीक्षा नहीं होती केवल कक्षा में होने वाले टेस्टों तथा वर्ष भर के कार्य के अनुसार शिक्षक द्वारा दी गयी रिपोर्ट के आधार पर बालकों का मूल्यांकन किया जाता है। इस स्कूल का माध्यमिक स्तर फ्रांस के 'बैकालोरियट स्तर' तथा भारत के मैट्रिकुलेशन के समकक्ष माना जाता है। प्रत्येक बालक अपनी रूचि और क्षमता के अनुसार शिक्षा प्राप्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता है। छोटे बालकों की शिक्षा आधुनिक विधियों द्वारा होती है आश्रम में किसी धर्म विशेष की श्यिाक्षा नहीं दी जाती यहाँ बालकों के शारीरिक विकास पर विशेष बल दिया जाता है। सभी बालकों के लिए खेल कूद तथा व्यायाम अनिवार्य है।[4]

शिक्षण विधि

शिक्षण विधियों सम्बन्ध में श्री अरविन्द के विचार पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं है। कही तो वे प्राचीन शिक्षा पद्धति के अनुसार क्रमिक विधि अर्थात् एक दो विषयों के अध्ययन के बाद अन्य एक दो विषयों का अध्ययन आरम्भ करने की बात करते हैं कही बच्चे के शारीरिक मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए अनेक विषयों एवं क्रियाओं की शिक्ष एक साथ करने की बात करते हैं। इसी प्रकार एक ओर तो वे बच्चे की शक्ति का विधान उसकी भौतिक शक्तियों के आधार पर करने की बात करते हैं और दूसरी ओर उसके लिए योग की क्रिया के महत्व को स्वीकार करते हं परन्तु एक बात अवश्य है और वह यह कि वे प्राचीन विधियों को नया रूप देना चाहते थे। वे उपदेश प्रवचन व्याख्यान और अन्य भौतिक विधियों के प्रयोग की स्वीकृति तो देते थे लेकिन इस शर्त के साथ कि किसी भी स्थिति में बच्चों को रटाया नहीं जायेगा। किन्तु उन्हें स्वयं के प्रयत्नों के आत्मसात कराया जायेगा यह तभी सम्भव है जब शिक्षण रूचिकर हो इसके लिए वे प्राथमिक स्तर पर कहानी विधि का प्रयोग करते हैं की बात कहते हैं।

आज कल इस बात पर वक्त दिया जाता है कि छात्रों को कक्षा में सक्रिय बनाया जाय। श्री अरविन्द सक्रियता में समर्थक तो हैं किन्त वे केवल सक्रियता के पक्षपाती नहीं है। उनका विचार है कि बालक को ऐसा प्रशिक्षण दिया जाय कि वे निष्क्रियता से भी सीख सके मस्तिष्क को निष्क्रिय करने का प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है। छात्रों को इस बात का अभ्यास होना चाहिए कि वे आवश्यकता पड़ने पर मस्तिष्क को निष्क्रिय बना दे।[5]

श्री अरविन्द के द्वारा शिक्षण विधियों का प्रयोग किया गया है वे इस प्रकार से हैं।

रूचि के आधार पर शिक्षा

श्री अरविन्द ने रूचियों के आधार पर बालक को शिक्षा देने की प्रक्रिया पर जोर दिया। जिस विषय में बालक की रूचि है वह उसी के तरफ जा सकता है उनका विचार है कि बालक के ऊपर बलात कोई भी विचार अथवा ज्ञान न थोपा जाय। शिक्षा के विषय में बालक को पूर्ण स्वतंत्रता हो और वह अपने इच्छा के अनुरूप ज्ञान प्राप्त कर सके। बालक भले ही दबाव में आकर उसको स्वीकार कर लेता है परन्तु वह अपने मार्ग से विचलित हो जाता है। इस लिए बालक को उसकी रूचि के अनुसार शिक्षा दी जाय ताकि वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर ले।[6]

छात्रों को अपने विषयों को चुनने और सीखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है ताकि अन्ततः वे अपने विकास की जिम्मेदारी खुद उठा सके। अध्यापक अधिकतर सलाहकार तथा पथप्रदर्शक ही होता है। यह शिक्षा केन्द्र किसी प्रकार की डिग्री या डिप्लोमा प्रदान नहीं करता क्योंकि उसका कार्य छात्रों में ज्ञान का आनन्द तथा प्रगति की आकांक्षा जागृत करना है। अतः श्री अरविन्द ने अपने शिक्षण विधि में बालकों को स्वयं अपनी रूचि के अनुसार पाठ्यक्रम का चयन पर बल देते हैं। उनका मानना है बालक अपनी रूचि के अनुसार पाठ्यक्रम का चयन करता है वह उसे जल्दी से आत्मसात कर लेगा तथा उसका उपयोग कर सकेगा।[7]

भाषा ज्ञान

भाषा के सम्बन्ध में श्री अरविन्द का मानना है कि बालक को सर्वप्रथम मातृ भाषा का ज्ञान करा दिया जाना चाहिए। मातृभाषा के ज्ञान के बिना वह अन्य भाषाओं का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता मातृभाषा के माध्यम से उसे अन्य विषयों का ज्ञान कराना चाहिए। बालक की स्मृति तर्क और कल्पना शक्तियों का विकास मातृ भाषा द्वारा सरलता से होता है।[8]

मातृभाषा के ज्ञान से बालक अपने चारों तरफ के परिवेश से परिचित हो सकेगा तथा इससे यह समझ सकेगा कि हमारी संस्कृति क्या है और इसे किस प्रकार से सुरक्षित रखा जा सकता है। यदि बालक को मातृभाषा का ज्ञान कराया जाता है और वह उसे प्राप्त कर लेता हे तो वह अन्य भाषाओं का ज्ञान आसानी से प्राप्त कर सकता है। मातृभाषा के ज्ञान हो जाने से बालक में स्मृति तर्क शक्ति तथा कल्पना शक्ति का विकास होता है वह किसी भी स्थिति में अपने स्मृति के द्वारा किसी विषय पर तर्क करेगा उसकी स्मरण शक्ति का विकास होगा तथा कल्पना शक्ति के द्वारा वह विषय की गहराई पर जा सकता है। अतः बालक को सर्वप्रथम मातृभाषा का ज्ञान होना चाहिए।

स्वप्रयत्न और स्थानुभव द्वारा सीखना

श्री अरविन्द रटने की विधि का विरोध किया है और स्वप्रत्यन एवं स्वानुभव द्वारा सीखने पर बल दिया है। बालक स्वप्रयत्न द्वारा ज्ञान प्राप्त करता है तो वह स्थायी होता है। उनका मानना है कि बालक को स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए और उसे स्वयं प्रयत्न का अवसर देना चाहिए। वे रटने के विरूद्ध है बल्कि जो सामग्री बच्चों को प्राप्त है वे उन्हें स्वप्रयत्न से प्रयोग करे और उनके प्रयोग को स्वयं देखते रहे इस प्रकार अपने आप, अनुभव करके सीखे इससे रोचकता और मनोरंजकता आती है। निरीक्षण विधि के साथ ज्ञानेन्द्रियों के प्रयोग द्वारा शिक्षा की विधि होती है जिसके प्रयोग के लिए श्री अरविन्द का संकेत मिलता है। बालक को स्वतंत्र छोड़ देना चाहिए और उसे स्वयं प्रयत्न का अवसर देना चाहिए। स्वयं प्रयत्न तथा निरीक्षण के फल स्वरूप उसे जो व्यक्तिगत अनुभव होंगे वे अधिक स्थायी और लाभप्रद होंगे। छात्र विभिन्न विषयों में अपनी रूचि के अनुसार शिक्षण प्राप्त कर सकेंगे विज्ञान शिक्षण के छात्रों को जिज्ञासा प्रवृत्ति का उदबुद्ध करना आवश्यक ही प्राकृतिक पदार्थो के निरीक्षण को प्रोत्साहन करना है। फूलों के परीक्षण एवं तुलना के द्वारा छात्र विज्ञान को सीखें। भूमि और पाषाणों के निरीक्षण द्वारा भूगर्भ शास्त्र को सीखे पशुओं के सूक्ष्म निरीक्षण से जीव विज्ञान सीखे आस–पास के वातावरण को आधार बनाकर विज्ञान की शिक्षा दी जाये[9] इस प्रकार से सीखे गये ज्ञान में स्थायित्व होता है।

प्रेम और सहानुभूति पूर्ण वातावरण में शिक्षा

शिक्षण विधि में श्री अरविन्द ने प्रेम और सहानुभूति से ओत–प्रोत

वातावरण को बहुत महत्वपूर्ण माना है उनका विचार है कि ऐसे वातावरण में बालक का मन पढ़ाई में लगा रहता है यदि बालक दूषित वातावरण में शिक्षा प्राप्त करक रहा हो तो वह शिक्षा नहीं प्राप्त कर सकता क्योंकि उसके शिक्षा में विभिन्न प्रकार के व्यवधान उत्पन्न होगें। जिससे बालक शिक्षा नहीं ग्रहण कर सकेगा। उसके आत्म बल में कमी आयेगी तथा वह अपने पथ से विचलित हो जायेगा। इस प्रकार बालक के शिक्षण के लिए प्रेम तथा सहानुभूति पूर्ण वातारण उत्पन्न करना चाहिए जिससे उसका मन हमेशा पढ़ाई में लगा रहे। अनवध्यान या ध्यान निक्षेप की समस्या नहीं उत्पन्न होगी इसके साथ ही साथ बालक में ज्ञार्नाजन की इच्छा बलबती हो जाती है।

करके सीखना

श्री अरविन्द ने करके सीखना अथवा क्रिया विधि का जोरदार समर्थन किया है। उनका विचार है कि बालक की शिक्षा में यह विधि अत्यन्त उपयोगी होती है इस विधि में बालक क्रियाशील रहकर स्वयं के अनुभवों से बहुत कुछ सीखता है तो जो कि व्याख्यान आदि विधियों द्वारा नहीं सीख सकता इनके द्वारा क्रियाविधि से प्राप्त ज्ञान अधिक स्थायी और लाभदायक होता है। श्री अरविनद का मत है कि बालक की शिक्षा वर्णमाला से ही आरम्भ होनी चाहिए सबसे पहले उसे प्रकृति का निरीक्षण कराना चाहिए। पुरूषों, लताओं, सितारां, पशुपक्षियों, वनस्पतियों आदि का निरीक्षण करना पहले आवश्यक है। यह एक प्रकार का वस्तुओं पर प्रयोग है उसके बाद शब्दों का ज्ञान देना है। शब्दों के प्रयोग का छात्रों को बहुत अधिक अभ्यास कराना चाहिए। बालक पहले शब्द का स्वरूप स्वर और अर्थ का सम्यक बोध करे और तत्पश्चात विभिन्न शब्दों की समानताएँ एवं असमानताएँ समझे इससे उसे व्याकरण सीखने में मदद मिलेगी शब्द प्रयोग के द्वारा उसमें साहित्यक योग्यता का विकास करना है बालक जब किसी कार्य को करके सीखता है तो उसका ज्ञान स्थायी होता है अतः बालक को उनकी मूल प्रवृत्ति के अनुसार करके सीखने पर बल देना चाहिए। इस प्रकार बालक में कल्पना शक्ति तर्क शक्ति का विकास होता है जिससे वह किसी विषय पर अपना निष्कर्ष ले सके।

सहयोग विधि

श्री अरविन्द ने क्रिया विधि के साथ–साथ सहयोग विधि को भी बहुत महत्व दिया हैं। उनके विचार में बालक परस्पर सहयोग से कार्य करते हैं तो एक–दूसरे के अनुभवों से बहुत लाभ उठाते हैं। इनमें किसी विषय पर छात्रों में तर्क होता है जिसके द्वारा आसानी से विषय को कंठस्थ किया जा सकता है। सहयोग के द्वार छात्र आपस में एक–दूसरे के कार्यों में भागीदार होते हैं तथा जिसके द्वारा कठिन कार्य आसान हो जाता है। प्राप्त ज्ञान स्थायी हो जाता है। सहयोग के द्वारा जब दो छात्र किसी कार्य को करते हैं तो उनके अन्दर आत्म बल आ जाता है जिससे वे शिक्षण कार्य को आसान बना सकते हैं। इस विधि द्वारा कठिन कार्य भी आसान हो जाता है और बालक आसानी से अपना कार्य कर सकता है। बालक एक–दूसरे के अनुभवों का लाभ उठाते हैं तथा साथ ही साथ उनमें सहयोग एवं सामाजिकता के रूचि का विकास होता है।[10]

पाठ्य पुस्तक विधि

श्री अरविन्द ने उपयुक्त नवीन विधियों का समर्थन किया है यद्यपि पाठ्य पुस्तक विधि का विरोध नहीं किया है उनका विचार है कि बालक में रटने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए परन्तु उन्हें अच्छी पुस्तकों से परिचित कराया जाना चाहिए। बालक को किसी विषय का क्रमबद्ध और विशिष्ट ज्ञान प्रदान करने के लिए पुस्तकों का होना आवश्यक है अच्छी पाठ्य पुस्तकों का अध्ययन कराया जाये और ज्ञान की इच्छा जागृति की जावे जिससे विद्यार्थी स्वयं ज्ञान खोजने का प्रयत्न करें। पाठ्य पुस्तक विधि का तात्पर्य पाठ्य पुस्तकों का रटना कदापि नहीं है। बल्कि उन्हें सहायक एवं सन्दर्भ पुस्तक बनाकर उनसे काम लिया जाये। अतः बालक को अच्छी पाठ्य पुस्तकों से परिचित कराना आवश्यक है जिससे वे ज्ञान को प्राप्त कर सके।

वर्तमान शिक्षण विधियाँ

शैक्षिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हम पाठ्यक्रम का निर्माण करते हैं। किन्तु प्रश्न यह है कि पाठ्यक्रम को किस विधि से छात्रों के मन का अंग बना दिया जाय जिससे वह अपने उद्देश्य की प्राप्ति कर सके वस्तुतः विधि का निर्माण करना वैज्ञानिक का काम है पश्रतु उपयुक्त विधि का निर्माण तब तक नहीं किया जा सकता जब तक उद्देश्य का ज्ञान न हो। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि लक्ष्य के ज्ञान के अभाव में विधि का निर्माण करना सम्भव नहीं।

विवेकानन्द के अनुसार : शिक्षण विधि ध्यान की एकाग्रता तर्क, व्याख्यान विचार विमर्श उपदेशविधि, अनुकरण विधि द्वारा शिक्षक का उत्तर चरित्र गुणों का अनुकरण व्यक्तिगत निर्देशन तथा परामर्श विधि को बताया।

सुकरात ने प्रश्नोत्तर विधि को जन्म दिया।

प्लेटो ने सम्वाद विधि तथा रूसों ने बालक की स्वतंत्रता पर बल दिया मान्टेसरी ने इन्द्रीय यथार्थ वाद के आधार पर इन्द्रीय प्रशिक्षण पर बल दिया।

फ्रोबेल ने अपने दर्शन के अनुसार किण्डरगार्डन पद्धति को जन्म दिया।

इस प्रकार से भिन्न–भिन्न शिक्षा शास्त्रियों एवं दार्शनिकों ने भिन्न–भिन्न शिक्षण विधियों का जन्म दिया तथा भिन्न–भिन्न शिक्षण विधियों को ग्रहण करने का परामर्श दिया।

निष्कर्ष

श्री अरविन्द का शिक्षण विधि के सम्बन्ध में विचार पूर्णतः स्पष्ट नहीं फिर भी उन्होंने अनेक विधियों का प्रतिपादन किया है जैसे रूचि के आधार पर शिक्षा भाषा में मातृभाषा के ज्ञान पर जोर दिया है। स्वप्रयत्न तथा स्वानुभव द्वारा सीखना प्रेम तथा सहानुभूति के वातावरण में शिक्षा इसमें अध्यापक का छात्रों के साथ प्रेम का व्यवहार होना चाहिए तभी वह ज्ञान प्राप्त कर सकेगा करके सीखना सहयोग विधि तथा पाठ्य पुस्तक विधि उनके शिक्षण विधियों में सुकरात की प्रश्नोत्तर विधि प्लेटो की सम्वाद तथा रूसो की बालक की स्वतंत्रता मान्टेशरी के इन्द्रिय प्रशिक्षण आदि विधियों का समन्वय मिलता है श्री अरविन्द इन विचारकों के विधियों का समर्थन किया है।

श्री अरविन्द का मानना है कि बालक के साथ प्रेम तथा सहानुभूति का वातावरण उत्पन्न करना चाहिए।

सहयोग तथा करके सीखने की विधि में गाँधी जी तथा श्री अरविन्द के विचार बिलकुल एक जैसे हैं क्योंकि दोनों ने इस पर जोर दिया है तथा गाँधी जी पुस्तक विधि का विरोध नहीं किये हैं वे भी श्री अरविन्द की भाँति अच्छी पुस्तकों का समर्थन किये हैं जो बालक के सर्वांगीण विकास में सहयोग दे सके।

संदर्भ

1. रमन बिहारी– शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ, 1996, पृ.164

2. श्री अरविन्द – श्री माताजी के विषय में, श्री अरविन्द सोसाइटी पाण्डिचेरी, 1973, पृ. 201
3. योजना– दिसम्बर 1997
4. के.बी. लाल– शिक्षा दर्शन, आलोक प्रकाशन, इलाहाबाद, 1975, पृ. 302
5. रमन बिहारी – शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्र का सिद्धान्त,रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ, 1997, पृ.162
6. के.वी. लाल– शिक्षा दर्शन पृ. 295
7. योजना–दिसम्बर 1997 पृ. 13
8. योजन –दिसम्बर 1997, लक्ष्मी नारायण गुप्ता – शिक्षा दर्शन, कैलाश प्रकाशन, इलाइाबाद, पृ.180
9. राम सकल पाण्डेय –शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय, पृष्ठभूमि–25 विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1995, पृ. 253
10. के.वी. लाल– शिक्षा दर्शन, आलोक प्रकाशन, 110 विवेकानन्द मार्ग इलाहाबाद, पृ. 296, लक्ष्मी नारायण गुप्ता– शिक्षा दर्शन, कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 181